MISSION MEDITATION

Established by :

Enlightened Mystic Gurumaiya Dr. Hareshwarideviji

MAUN MANDIR

(A place for silence)

at. & po. Chapad, dist. Vadodara, Gujarat, INDIA

Ph. +91 9913153609, 7285085733

धर्म क्या है ?

हर भगवान अपनेआप में परिपूर्ण और अनूठे होते हैं। सबको चाहने वाला वर्ग भिन्न भिन्न होता है। वे भगवान जब तक पृथ्वी पर होते हैं तब तक उन्हें द्वंद्व में जीना पड़ताहै। वे साधारण मनुष्य की तरह ही संघर्ष करते हैं। वे आपकी भाति ही खाते, पीते, सोते, और उठते हैं। फर्क आंतरिक गुणवत्ता में होता है। जिसकी वजह से उनके विचार और व्यवहार आपको अलग लगते हैं। उनकी चेतना विशेष ढंग से सक्रिय होती है। जो आनन्द और कल्याण को जन्म देती है। वे लोग पृथ्वी को विशेष सुंदर और सुखशांतिमय बनाने के लिए अपनी समग्र ऊर्जा लगा देते हैं। ऐसा होना उनके लिए स्वाभाविक होता है। वे किसी नेता की भांति योजनाएं नहीं बनाते। नहीं बड़े बड़े वचन देते हैं और ना ही घोषणाएं करते हैं। वे तो पुष्प की भांति खिलते जाते हैं और सुवास फैलाकर चले जाते हैं। वे दूसरों को वचन देने की जगह स्वयं के वचनों से स्वयं के साथ प्रतिबद्धित होते हैं। उनका जीवन ही उपदेश बन जाता है। और जब किसीका जीवन ही प्रेरणादायक और उपदेशात्मक हो तो उनके वचनों का गहन प्रभाव पड़ना स्वाभाविक होता है। सत्य तो सत्य होता है। उसको पढ़ाया नहीं जा सकता। उसमें सिर्फ जिया जा सकता है और उसका दर्शन होता है। वह एक सूक्ष्म और आंतरिक दर्शन है। लोगों को आत्मनिष्ठ पुरुषों के जीवन में ही सत्य का दर्शन होने लगता है। जिसकी रग रग में सत्य भरा हो उसके वचनों में सत्य का उतरना और प्रभावकता होना स्वाभाविक है।

मेरे अनुसार सत्य वही है जो कभी पुराना न हो। जो कभी निरर्थक न हो। जिसे कभी बदलने की या फैंकने की जरूरत न रहे। जिसकी सदा काल समान रूप से अनिवार्यता रहे और मनुष्यता का जब तक अस्तित्व रहे तब तक वह उसका मार्गदर्शन करता रहे। जो तर्क के पार हो जो सुख शांति आनंद और स्वतंत्रता के जन्मदाता हो। वह भले कड़वा हो परंतु कल्याणकारी हो।

ऐसे वचनों को भारत आगम और निगम साहित्य नाम से जानता है। वह धर्म साहित्य में स्थान ले लेता है। ऐसे वचनों से उपदेश करने वाले देव बन जाते हैं। क्योंकि वे धरती के मनुष्य से अलग होते हैं। इसलिए पृथ्वी के लिए वे देव बन जाते हैं। ऐसी आत्माओं को भी संघर्ष तो करना पड़ता है, परेशानियाँ भी झेलनी पड़ती हैं, कुछ लोग उनके विरोधपक्ष में भी खड़े होते हैं परंतु वे जीवन को एक लीला की भांति लेते हैं।

मंच पर के विलन हों या वास्तविक विलन परंतु दृष्टा भाव आ जाने के बाद आत्मनिष्ठ पुरुष को कुछ भी झेलना नहीं पड़ता। समन्दर की भांति उनके जीवन में सुख दुख का आना जाना सहज बन जाता है। लहरों का उठना और मिटना जैसे एक समुद्र के अस्तित्व का एक भाग है। वैसे ही जन्म और विदा के दो किनारों के बीच उठती हुई सुख दुख की लहरों को वे साक्षी भाव से देखते रहते हैं। और उनके जीवन जीने के अनूठे ढंग से काफी जिज्ञासुओं को प्रेरणा मिलती रहती है, बल मिलता रहता है। काफी लोगों की समझ बढ़ती रहती है। ऐसे लोग उन्हें अपने इष्ट के रूप में स्वीकार कर लेते हैं, प्रिय के रूप में स्वीकार कर लेते हैं। अपने पूज्य के रूप में स्वीकार कर लेते हैं। वही उनके लिए भगवान बन जाते हैं।

अपने भगवान को दुनियाँ कभी भूल न जाए और वे अमर बन जाएं इसलिए उनके भक्त सबकुछ करते हैं। उनके वचनों को संग्रहित करके शास्त्र बनाते हैं। वस्त्रों और अन्य चीज़ों को पवित्र मानकर संभाले रखते हैं। उनके जन्म स्थान पर और पर्यटन की जगह पर उनकी स्मृति में मंदिर बनाते हैं। निर्वाणभूमि पर समाधि चुनवाते हैं और उनकी वाणी का विविध माध्यमों से प्रचार करते हैं।

धीरे धीरे अनुयायिओं का आग्रह बढ़ जाता है कि जैसे वे विभूति जी गए वैसे ही और लोग भी जिएं और इसलिए वे लोग कुछ

नियम बनाकर उसपर अपनी ओर से धर्म की मोहर मारकर उसे धार्मिक कानून बना देते हैं। यहाँ से गलती का प्रारंभ होता है।

मैं कहती हूँ कि अपने प्रिय के प्रति, इष्ट के प्रति प्रेम रहे यह बराबर है। उनके विचार जो कल्याणकारी और विश्व के लिए मार्गदर्शन रूप हों ऐसे विचारों का प्रचार हो यह भी ठीक है। उनकी स्मृति अविस्मरणीय बन जाए इसलिए प्रेमवश फोटो चित्र या मूर्ति बना लें यह भी ठीक है परंतु वे जैसे जी गए, वैसे ही जिओ ये आग्रह और उसको ही धर्म मानना यह निरर्थक है। क्योंकि ऐसा संभव ही नहीं। हरेक व्यक्ति की क्षमता एक सी नहीं होती। आग्रह और नियम मनुष्य के बीच एक घुटन पैदा करते हैं। अपने इष्ट के प्रति, उनके चाहको का प्रेम जब धर्म के नाम पर लोगों को बंधन में बांधने लगता है तब ऐसे धर्म, संप्रदाय का रूप लेने लगता है। और धीरे धीरे वहाँ से धार्मिकता विदा लेने लगती है। मैं कहती हूँ कि धर्म मनुष्य को मुक्त करे ऐसा चाहिए। प्रेम हमेशा मुक्ति देता है और कानून बंधन देता है। प्रेम से जन्मा हुआ धर्म ही सही धर्म है बाकी सब कानून है।

मेरा स्पष्ट मत है कि आपको अगर अपने इष्ट के प्रति प्रेम है तो उसके नाम से कानून मत थोपो। आपके इष्ट को लोग प्रेम भले करें, प्रेम में बहुत ताकत है, प्रेम मनुष्य को बदल देता है। मनुष्य का प्रेम होगा अथवा जब मनुष्य किसी भी कार्य को प्रेम से करने लगेगा तो समर्पण सहज ही घटित होगा। जिस धर्म में सहज समर्पण होता है वह धर्म सुवासित रहता है। ऐसे धर्म का जीवन लंबा होता है। जो धर्म मनुष्य के इष्टप्रेम को कठिन बंधनों में बांधता है, वह धर्म एक परंपरा बन सकता है प्रेम नहीं। ऐसे धर्म में कोई प्राण और आनंद नहीं होता परंतु उदासीनता, औपचारिकता और धर्मभीरुता होगी। ऐसे धर्म मुक्ति की बातें भले करें परंतु बंधन ही दे सकते हैं। ऐसे धर्मों में जो भीड़ होती है, वे धार्मिक भले दिखे परंतु उनके हृदय में कोई धार्मिकता नहीं होती।

मेरी बात को कितने लोग समझ पाएंगे ये नहीं कह सकती, फिर भी मेरा कहना है कि आपका प्रेम भले किसी भी इष्टदेव पर हो परंतु आप आपकी संतान को प्रत्येक धर्म के ग्रंथों को पढ़ने का मौका देना।

मैं जानती हूँ कि आपके लिए यह इतना आसान नहीं होगा। क्योंकि मनुष्य का मन पूर्वग्रह और आग्रहों से भरा हुआ होता है। आप अपने बच्चे को अपना ही धर्म देना चाहते हैं। उसीमें ही आपको उसका कल्याण नज़र आता है। परंतु हो सकता है कि ऐसा आग्रह गलत भी हो। अपने बच्चे पर आपके विचार, परंपरा, धर्मग्रंथ और नीति नियमों को थोपकर बचपन से ही उसके मन में एक ही बात लाखों बार डाल देंगे, तब उसका मानस आपके भगवान का स्वीकार करने लगेगा। परंतु यह एक मानसिक ट्रीटमेंट मात्र है। वह उसका कमाया हुआ भगवान नहीं है। वह तो आपकी अन्य चीज़ों भगवान को भी विरासत में देने की एक बालिश कोशिश है। उसका मन ऊपर ऊपर से आपकी बातों से संस्कारित हो जाता है। वह आपकी हाँ में हाँ मिलाने लगता है। वह आपका अनुकरण करने लगता है।

आप भय में, तकलीफ में, नुकसान में अथवा स्वार्थ साधने के लिए दौड़कर भगवान के मंदिर के पास जाते हो और कुछ मांगने लगते हो। इस मांगने को आप प्रार्थना कहते हो। गणित को प्रार्थना का नाम देना या स्वार्थ को प्रार्थना का नाम देना वह मूढता है या चालाकी। प्रार्थना के नामपर आदमी खुदको और भगवान को ठगते रहता है। धीरे धीरे ऐसा स्वार्थ साधना बच्चों को भी अच्छा लगता है। और वे एक व्यवस्था के लिए भ्रामक सत्य के रूप में किसी के द्वारा पकड़ा दिए हुए भगवान को भजता रहता है। यह परंपरा आगे बढ़ती रहती है परंतु प्रेम खो जाता है। उसमें कोई प्राण नहीं होता।

पृथ्वी पर आने वाले भगवानों से कुछ लोगों को प्रेम हो जाता है। कुछ समय के बाद कुछ चालाक लोगों के द्वारा धर्म के नाम पर राजनीति चलने लगती है। कुछ अबोध और कुछ स्वार्थियों की भीड़ मिलकर ऐसे धर्म का हिस्सा बन जाता है। और कभी मतभेद खड़े होने से या किसी अनुयायी के द्वारा क्रांति छेड़ देने से एक धर्म में से विविध संप्रदाय अस्तित्व में आने लगते हैं। लोग भूल जाते हैं कि मूल में तो प्रेम था। धर्म कहीं था ही नहीं। प्रेम ही धर्म था। जो भी था वह एक सत्य था। परंतु धीरे धीरे सत्य खो गया और भ्रम पलता रहा।

मैं कहती हूँ कि आपके बच्चे को आप धार्मिक स्वतंत्रता दो। उनको अपनी अंतर की आवाज़ के अनुसार जुड़ने दो अपनी पसंद के भगवान के साथ। थोपे हुए नियमों के कारण मनुष्य का धर्म एक हो सकता है। परंतु प्रेम कभी एक नहीं हो सकता। आपका प्रिय पात्र अलग होता है, आपके पुत्र का अलग, पुत्री का अलग, भाई का अलग, बहन का अलग। धर्म एक गहन प्रेम है, वहाँ मनुष्य का अस्तित्वगत रूप से जुड़ना अनिवार्य है। वह नीति, समाज या मस्तिष्क का विषय नहीं है। सबका प्रिय पात्र एक ही हो ऐसा कभी संभव नहीं होगा। अपने प्रिय पात्र को खोजना मनुष्य का जन्म सिद्ध अधिकार है। मनुष्य पर परंपरागत धर्म को थोपने को मैं धार्मिक अपराध कहती हूँ। ऐसा प्रायास एक आध्यात्मिक और हार्दिक अपराध भी है। यह एक सूक्ष्म हिंसा ही है। ऐसा धर्मजनून बेइंसाफी है। बेइंसाफी सबसे बड़ा अधर्म है।

प्यारे साधको !

अपने इष्ट को खुद ही ढूंढना पड़ता है। अन्य के ढूंढे हुए इष्ट को जब अपना इष्ट बनाना पड़ता है। तब ऐसे इष्ट के साथ निभाना पड़ता

है, उसे झेलना पड़ता है। जो लोग धर्म के नाम पर निभाए जाते हैं उनमें प्रसन्नता और सुवास नहीं होती। ऐसा धर्म निष्प्राण है। वह एक औपचारिकता या व्यवस्था है। भक्त का प्रेम नहीं है। ऐसी धार्मिक व्यवस्थाओं में से आज बू उठने लगी है।

मैं कहती हूँ कि मनुष्य ज्यादा से ज्यादा इतना कर सकता है कि अन्य के इष्ट का आदर कर ले। परंतु आदर में और प्रेम में फर्क होता है। आदर में एक अंतर होता है। आदर शिष्टाचार और व्यवहार से प्रगट होता है। परंतु वह क्षणिक होता है। आदरणीय व्यक्ति के साथ चौबीसों घंटे रहने में कभी कभी अनुशासन का भार महसूस होता है और सजग भी रहना पड़ता है। जबकि प्रेम प्रतिपल घटित हो रही एक हार्दिक प्रक्रिया है। आदर में मान सन्मान देकर बात पूरी हो जाती है। परंतु प्रेम में पूर्ण समर्पण घटित होता है। और भक्त और भगवान के बीच का अंतर कम हो जाता है।

शास्त्र कहता है कि प्रेम चार प्रकार से होता है – स्वप्न दर्शन, गुण श्रवण, चित्र दर्शन और प्रथम दर्शन। परंतु मेरा अनुभव कहता है कि इष्ट देव से प्रेम होना यह एक अलग प्रकार है। ऐसे प्रेम को भक्ति कहा है। ऐसे रिश्ते मनुष्य की अंतरचेतना में जन्म लेते हैं।

जिसके वचनों से अंतरबोध जगने लगता है, जिसके विचार मात्र से शांति का अनुभव होने लगता है, जिसके विषय में सुनकर हृदय गदगदित और शरीर पुलकित हो जाता है और अकारण ही प्रेमाश्रु बहने लगते हों तब वो ही मनुष्य का इष्ट बन जाता है। यह एक गहन नाता है, उस नाते के बारे में बौद्धिक स्तर पर कुछ जानना बहुत मुश्किल हो जाता है। इष्ट के साथ यह प्रेम क्यों हुआ ? कैसे हुआ ? इन सारे प्रश्नों का कोई जवाब नहीं होता, वह तो बस हो जाता है।

ऐसा भी हो सकता है कि घर में पांच पीढ़ी से कृष्ण को पूजा जा रहा हो और पुत्र शिव प्रेमी या बुद्ध प्रेमी बन जाए। ऐसा होने में कुछ गलत नहीं है। सम्भव है कि उसकी चेतना किसी भिन्न विश्व में से आई हो। संभव है कि ऐसा आपके साथ या आपके परिवार में भी घटे और आप परंपरा को तोड़कर किसी और दिशा में मुड़ जाएं। ऐसा होने से आप पापी या अधार्मिक नहीं बन जाते। ऐसा होने से आप कोई नर्क में नहीं जाएंगे। कोई भले आपको कुछ भी कहे, भले डराए परंतु आपको अपना मार्ग ढूंढ लेना का गौरव होना चाहिए।

धर्म और प्रेम मनुष्य को निर्भयता देता है। आपका तालमेल अगर शिव, बुद्ध अथवा महावीर से मिल रहा हो। उनकी शैली या विचारों से आप ज्यादा निकटता और अपनापन महसूस कर रहे हों, उनके वचनों को समझने में आप ज्यादा सरलता का अनुभव करते हो तो कोई अधर्म नहीं कर रहे हो। प्रेम हमेशा व्यक्तिगत और अस्तित्वगत होता है। जरूरी नहीं कि आपके प्रिय को सब प्रेम करें और दूसरे के प्रिय को आप प्रेम करें। भक्त और भगवान का रिश्ता तो एक गहन रिश्ता है। उसके मूल को ढूंढना मुश्किल है। समुद्र का थाह लेना असंभव है वैसे ही भक्त की चेतना की गहराईओं को जानना असंभव है।